''ब्रह्ममोक्कटे'' ग्रंथमाला

'वल्ललार'
ज्योति रामलिंगस्वामी

हिन्दी अनुवाद

डॉ.आर.सुमन लता

तेलुगु मूल

आचार्य पी.वी.अरुणाचलम

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2018

VALLALAR JYOTHI RAMALINGASWAMY

Hindi Translation
Dr. R. Suman Latha

Telugu Original
Prof. P. V. Arunachalam

T.T.D. Religious Publications Series No. 1285

First Edition - 2018

Copies: 1000

Published by
Sri Anil Kumar Singhal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Publications Division
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati

प्राक्कथन

भारत के विविध प्रान्तों में, विभिन्न समयों में सभी कुल व जातियों में अनेक महान विभूतियाँ अवतरित हुईं। ऐसी महात्माओं ने अपनी समकालीन विविध परिस्थितियों से जूझते हुए सामाजिक प्रगति के लिए अथक परिश्रम किया था। इसके लिए उन्होंने जनता में सामाजिक चेतना के साथ - साथ आध्यात्मिक चेतना भी विकसित करने के लिए अपना तन-मन-धन लगाया था।

ऐसी महात्माओं की जीवनियों को, उनके द्वारा व्यक्त की गई जीवन की यथार्थताओं व आध्यात्मिक संदेशों को भक्तों तक, विशेषकर, भावी नागरिकों (बच्चों) तक पहुँचाने के लिए तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने 'ब्रह्ममोक्कटे' नामक शीर्षक के अन्तर्गत एक पुस्तक श्रृंखला को प्रारंभ किया है। तदनुरुप कुछ विद्वानों से ऐसी महान विभूतियों के जीवन चरितों का चित्रण करनेवाले ग्रंथ लिखवाकर प्रकाशित करने का संकल्प किया है।

इस क्रम में डॉ. सुमन लता द्वारा अनूदित 'वल्ललार' ज्योति रामलिंग स्वामी नामक पुस्तक आप तक हम पहुँचा रहे हैं। यह हमारी आकांक्षा है कि इस ग्रंथ के अध्ययन द्वारा बड़े और छोटे दोनों आध्यात्मिक चेतना से लाभान्वित हो जाएँगे।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

‘‘वल्ललार’’
ज्योति रामलिंगस्वामी

प्राचीन काल से इस विशाल पृथ्वी पर कभी - कभी महात्माओं का जन्म कहीं न कहीं जीवनियों और उनसे प्रज्वलित ज्ञान ज्योतियों के बारे में हम पढ़ते और सुनते आ रहे हैं। ऐसी महिमान्वित परंपरा से जुड़ा एक विशेष नाम है ‘‘श्रीज्योति रामलिंगस्वामी’’। उनका जन्म चिदंबरम् के निकट हुआ और कड़लूर के समीप वड़लूर गाँव को उन्होंने अपनी कर्मभूमि के रूप में चुना। अतः उनकी महानता और विशेषताओं से पूरा तमिल प्रदेश परिचित है। उनकी अपनी रचनाओं के साथ - साथ, उनकी जीवनी के बारे में रचनाएँ भी अधिकतर तमिल भाषा में और थोड़े - बहुत अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हो रहे हैं। केवल सन् १९४७ में विद्वान पुल्लूरि मुनिरत्नम् पिल्लै जी ने इनके बारे में तेलुगु भाषा में एक छोटी-सी पुस्तिका लिखी थी, जिसका पुनःप्रकाशन तिरुपति में हुआ था। अतः तेलुगु भाषा भाषिओं को ‘‘ज्योति रामलिंगस्वामी’’ के बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है।

पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश रूपी पंचभूतों के प्रतीकात्मक शिवलिंग क्रमशः काँचीपुरम् अथवा तिरुवारूर, श्रीकालहस्ती, तिरुवानैक्कावल, तिरुवण्णामलै और चिदंबरम् में विराजमान हैं। इनमें से भारतमाता के हृदयकमल के समान पावन ‘चिदंबरम्’ क्षेत्र विख्यात है।

इसी चिदंबरम् पावन स्थान के निकट पश्चिमोत्तर कोने में स्थित ‘मरुदूर’ गाँव, परम भक्त रामय्या पिल्लै नामक सज्जन का वास स्थान था। उनका जन्म पटवारियों के वंश में हुआ, जो ‘आल’ महर्षि के गोत्रज थे। उनकी पाँच पत्नियाँ थी और गृहस्थ धर्म को रामय्या पिल्लै भली - भाँति

निभा रहे थे। उन्होंने छठी बार चेन्नै के निकट के पोन्नेरी गाँव से कुछ दूरी पर स्थित 'चिन्नकावण पल्लै' की चिन्नम्मा से विवाह किया।

रामय्या पिल्लै, मरुदूर और समीपस्थ गाँवों के विद्यार्थियों को पढ़ाने के साथ - साथ, विरासत में प्राप्त पटवारी का कर्तव्य भी निभाते हुए आजीविका चलाते थे। चिदंबरम् में विराजमान भगवान नटराज की निरंतर आराधना करते हुए सादा जीवन बिताने वाले, सौम्य, रामय्या पिल्लै के प्रति सारे लोग अत्यंत आदर का भाव रखते थे। वे शान्त जीवन बिता रहे थे। छः बार विवाह करने के बाद भी उनकी कोई संतान नहीं थी, जो उनके लिए चिन्ता का विषय बना था। कुछ समय के पश्चात् ज्ञानाकाश क्षेत्र के अधिपति भगवान शंकर की कृपा से, चिन्नम्मा के गर्भ से दो पुत्र और दो पुत्रियों का जन्म हुआ। कई वर्षों से संतान के बिना सूना - सूना सा लग रहा उनका घर, अब बच्चों की किलकारियों से गूँजने लगा। उनके दो बेटों का नाम सभापति पिल्लै और परशुराम पिल्लै था। सुन्दरांबा और उण्णमलै अम्मा उनकी बेटियों के नाम थे। संतान का पालन - पोषण बड़ें लाड़ - प्यार से होता था।

एक दिन, भोजन करने के बाद मध्याह्न के समय रामय्या पिल्लै विश्राम कर रहे थे। इतने में उनके आँगन में भभूति और रुद्राक्ष धारण कर, एक शिवयोगी प्रकट हुए। सही अर्थों में अतिथि, और ऊपर से भूखे खड़े उस महान योगिराज को रामय्या गृहस्थ धर्म का पूरी निष्ठा के साथ अनुपालन करने वाली उस गृहिणी के साथ सेवा की। उनसे शिवयोगी अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने आशीर्वाद दिया - 'माते! इस भस्म को तुम स्वीकारो! 'समरस शुद्धि सन्मार्ग बोध -' के चक्रवर्ती कहलाने योग्य महान पुत्र तुम्हारे गर्भ से जन्म लेगा! आशीर्वाद देकर

अदृश्य हो गए। उस शिव योगी की बातों को सुनकर रामय्या पिल्लै को आश्चर्य हुआ। उन्होंने मान लिया कि चिदंबरम् में विराजमान परमात्मा 'नटराज' की लीलाएँ ऐसी ही अद्भुत होती हैं। योगिराज का कथन सत्य सिद्ध हुआ। चिन्नम्मा के गर्भ से सन् १८२३ में ५ अक्तूबर को, पूर्वोदय में हुआ। रामय्या पिल्लै ने शिवयोगी के अनुग्रह और आशीर्वाद का बड़े आनंद के साथ स्मरण करते हुए, इस तीसरे बेटे का नाम 'रामलिंगम' रखा।

पाँच महीने के शिशु रामलिंगम् को लेकर, रामय्या पिल्लै, पत्नी के साथ अपनी मनौतियाँ पूरी करने चिदंबरम् की यात्रा पर निकले। वहाँ विराजमान भगवान नटराज और माता पार्वती की आरती हो रही थी और भोग चढाया जा रहा था। रामय्या पिल्लै सपरिवार मूल मूर्ति के सामने खड़े हो गए। उनकी पत्नी की गोदी में रहनेवाले नन्हें शिशु रामलिंगम्, ज्योति के रूप में प्रज्वलित आरती को एकटक देखते हुए, जोर - जोर से हँसने लगा। मात्र पाँच महीने के उस नन्हें से बच्चे को ऐसे जोर - जोर से हँसते देख पुजारी दीक्षित और माता - पिता समेत, वहाँ दर्शन करने आए हुए भक्त गण भी अवाक् रह गए। कुछ क्षणों के बाद पुजारी दीक्षित ने शिशु रामलिंगम् के गालों को स्नेहपूर्वक स्पर्श करते हुए कहा - 'यह तो दिव्य शिशु है। साक्षात् कनक सभापति का ही अंश है। इसे आप केवल अपना पुत्र ही मत समझिए।' अपने बेटे की इतनी प्रशंसा करने वाले दीक्षित को रामय्या पिल्लै ने पूरी श्रद्धा के साथ अभिवादन किया। वे अपने बेटे की इस असाधारण चेष्टा के बारे में विचार करते हुए घर वापस लौटे। इस घटना के बारे में जानकर, लोग, रामय्या दंपति के साथ - साथ बालक रामलिंगम के भी दर्शन करने आने लगे।

कुछ दिनों के बाद रामय्या पिल्लै का स्वर्गवास हुआ। यजमान की मृत्यु के पश्चात् चिन्नम्मा के लिए घर चलाना कठिन हो गया और उसके कारण, उसे अपनी संतान के साथ पोन्नेरु, मायका पहुँचना पड़ा। बड़ा बेटा सभापति पिल्लै, शिक्षित होकर अध्यापक बना और परिवार के भरण-पोषण का भार अपने ऊपर लिया। केवल शिक्षक के रूप में मिल रहे वेतन से घर चलाना कठिन होते देख, सभापति ने पुराण प्रवचन करना भी, अतिरिक्त आय के लिए आरंभ - किया।

रामलिंगम् का 'अक्षराभ्यास' हुआ। बड़े भाई ही उसके अध्यापक व प्रथम गरु थे। बाद में बड़े भाई ने अपने गुरू और महान् विद्वान कांचीपुरम् मोदलियार के पास रामलिंगम को विद्याभ्यास करने के लिए भेजा। अपने बड़े भाई के प्रति आदर और कुछ - कुछ डर के कारण विनम्र भाव से विद्याभ्यास करने का स्वांग तो रामलिंगम कर रहा था, किन्तु उसके मन में परमात्मा के प्रति भक्ति के लिए ही सबसे महत्वपूर्ण स्थान था। परमात्मा का निरंतर ध्यान करते हुए विचारों में डूबकर वह बालक, आशु रूप में कविताओं और गीतों की रचना कर लेता था। नित्यप्रति सायं संध्या की वेला में मद्रास महानगर के बीचों बीच स्थित कंदास्वामी मंदिर जाकर, ध्यान मुद्रा में बैठ जाता था। पूरी शक्ति और तन्मायता के साथ - स्तुति गीत गा रहे रामलिंगम को, भक्त गण भी भक्ति में तल्लीन होकर घेर लेते थे।

जैसे - जैसे रामलिंगम की प्रतिभा - चमकने लगी, वैसे - वैसे गुरु की ईर्ष्या भी बढ़ती गई और एक दिन तो बस, उन्होंने इस शिष्य की छुट्टी ही कर दी। गुरु के क्रोध के कारण शिक्षा से दूर होते जा रहे अपने छोटे भाई को देख, बड़ा भाई सभापति पिल्लै को बहुत अधिक चिन्ता होने लगी। सभापति पिल्लै क्रोध के मारे असंतुष्ट था और अंदर ही अंदर उसे

घुटन होने लगी। रामलिंगम को बहुत समझाया, अनुनय किया और यहाँ तक कि उसे डराया भी। किन्तु रामलिंगम ने मौन रहना ही उचित समझा। बड़े भाई में अब रामलिंगम के इस व्यवहार को सहने की क्षमता समाप्त हो गई और उसे घर छोड़ने का आदेश दे दिया। बड़ी भाभी, अर्थात् - सभापति पिल्लै की पत्नी, अपने पति की अनुपस्थिति में देवर को बड़े प्यार से भोजन करवाते हुए समझाने का प्रयास भी करती थी।

पिता के श्राद्ध के दिन सभापति, दुःखी हुआ कि मैं अपने छोटे भाई के साथ यह पितृ कार्य का निर्वाह नहीं कर पा रहा हूँ। उस अवसर पर बने पकवान और भोजन सभी को परेसते हुए और स्वयं खाते हुए सभापति पिल्लै को बहुत दुःख हुआ। उनकी पत्नी अपने देवर की प्रतीक्षा करने लगी। रामलिंगम सायं संध्या के समय, पिछवाड़े से अंदर आया। आँसू बहाती भाभी ने ठण्ड़ा भोजन ही परोसा और समझाने का प्रयत्न करते हुए कहा - 'यह कैसा दुर्भाग्य है तुम्हारा। जानते हो तुम्हारे भाई तेरे लिए कितने चिन्तित हैं? उनका मन और दुखाना ठीक नहीं। घर लौट आओ। अच्छा पढ़ो - लिखो! तुम्हारे लिए यहाँ क्या कमी है बताओ? अपने बड़े भाई का कहना मानकर पढ - लिखकर आगे बढ़ो! बस, इससे अधिक और कुछ नहीं चाहिए।' इस पर रामलिंगम ने कहा - 'भाभी! आप तो मेरे लिए माँ ही हैं। आपकी बात मैं मानूँगा। हमारे घर के ऊपरी मंजिल का कमरा मेरे लिए आप भाई से कहकर दिलवा दीजिए! मैं उसी में रहते हुए अपनी पढ़ाई कर लूँगा', लौट आने का वादा कर, वहाँ से चला गया।

रामलिंगम के इच्छानुसार ऊपर का कमरा उसे मिला। सब प्रसन्न हुए कि अब यह बालक अध्ययन में जुट जाएगा। किन्तु हुआ इसका उल्टा! सब लोगों ने यही माना कि अब यह बच्चा भली भाँति पढ़ लेगा।

जब भाई - भाभी तथा अन्यों ने समझा कि कमरा बन्द कर एकांत में रामलिंगम अच्छी पढ़ाई कर रहा है, उस समय वह तो अपने आपको आईने में देखकर, प्रतिबिम्ब को एकटक विहारता हुआ, सुब्रह्मण्यस्वामी (कुमार/कार्तिकेय) की उपासना में तन्मय हो जाता था। उसे अपने प्रतिबिम्ब में ही धीरे - धीरे सुब्रह्मण्यम का रूप गोचर होने लगा! उस समय बालक रामलिंगम की आयु केवल नौ वर्ष थी। उस आयु से ही उस बालक में एक प्रकार का दिव्य प्रकाश गोचर होने लगा। भगवान कार्तिकेय की कृपा और अनुग्रह के कारण बालक रामलिंगम आध्यात्मिक विद्या में अग्रसर होता चला।

बड़ा भाई सभापति पिळ्ळै एक धनी व्यक्ति के घर हर शनिवार को, सत्संग के अवसर पर पुराण प्रवचन कर, थोड़ी-सी अतिरिक्त आय समुपार्जित कर लेता था, ताकि घर को चलाने में काम आए। एक शनिवार के दिन, उस धनवान के घर, भगवान नटराज की स्वर्णमूर्ति की स्थापना होने वाली थी। इस अवसर पर ज्ञान संबंधर की जीवनी पर प्रवचन होने का कार्यक्रम निश्चित कर, उसकी घोषणा भी हो गई थी। किन्तु उस दिन सभापति पिळ्ळै अपनी अस्वस्थता के कारण नहीं जा पा रहा था। अतः उसने अपने छोटे भाई रामलिंगम से कहा कि वह किसी प्रकार से चला लें। वहाँ जाने के लिए झिझक रहे अपने छोटे भाई को उन्होंने धीरज बाँधते हुए कहा कि - ''रामलिंगम! डरो मत! तुम्हें जितना आता है, वहाँ उतना ही बोलो! एक - दो गीत गा लेना और थोड़ी बहुत कविताएँ सुना देना! बस! किसी प्रकार से आज का यह कार्यक्रम चला लेना!', ऐसी ढांढ़स बाँधते हुए, बड़े भाई सभापति पिळ्ळै ने अपने छोटे भाई रामलिंगम को प्रवचन देने के लिए भेजा। रामलिंगम की प्रवचन शैली ने सत्संग में उपस्थित श्रोताओं का मन आकर्षित कर लिया।

अपने मधुर कण्ठ से गीत गाकर, कविताओं को सुनाते हुए रामलिंगम ने बड़े मनमोहक शैली में प्रवचन को ऐसे दिया कि डेढ़ घण्टे का कार्यक्रम तीन घण्टों से अधिक समय तक चलता रहा। फिर भी भक्तगण पूरी तन्मयता से सुनते रहे; किसी ने उठने का नाम तक नहीं लिया। दूसरे दिन उस घर के यजमान के साथ - साथ, गाँव के कुछ प्रमुख व्यक्ति भी सभापति पिळ्ळै के घर पहुँचे। उसके स्वास्थ्य और कुशल - मंगल पूछने के पश्चात् - पिछले दिन के रामलिंगम के प्रवचन की भूरि - भूरि प्रशंसा की। उन्होंने अनुरोध किया कि आगामी सप्ताहों में भी आप के छोटे भाई के मुख से प्रवचन सुनने का सौभाग्य हमें प्रदान करें। सभापति पिळ्ळै ने 'हाँ' कह दी।

सभापति पिळ्ळै ने सहमति तो दे दी, किन्तु समझ नहीं पा रहे थे कि यह क्या विचित्र बात है। पढ़ाई लिखाई से जी चुरानेवाला, घुमक्कड़ रह चुका रामलिंगम को धीरे - धीरे अपने कर्तव्य का बोध हो रहा है। मुझे उसकी प्रशंसा सुनकर बड़ा आश्चर्य हो रहा है। अच्छे - बुरे का विश्लेषण कर सकना और अनुभवी सत्संगियों में प्रशंसनीय प्रवचन दे पाना, कोई साधारण बात नहीं! अपने आप में वे संदेह कर ही रहे थे - कि यह कैसे संभव हो पा रहा है। इस रहस्य को भेदने के लिए एक बार वे अपने भाई का पीछा करते गए और छिपकर सुनने लगे। अपने छोटे भाई को वे सुनते ही रह गए। उसके पुराण प्रवचन की शैली और व्याख्या करने के ढंग पर वे मुग्ध हो गए। रामलिंगम का प्रवचन गंगा के प्रवाह के समान आगे बढता गया। शब्दों का चयन और उनका विवरण तो मानो अत्यद्भुत ही था। सुन रहे अग्रज सभापति पिळ्ळै को विस्मय हो रहा था कि क्या यह सच है? कहीं सपना तो नहीं? मानो वे अवाक् ही रह गए।

उन्होंने अपने आप से प्रश्न किया - 'यह प्रवचन देने वाला व्यक्ति सच में मेरा भाई है अथवा कोई और? न - न! यह तो मेरा भाई नहीं, साक्षात् सुब्रह्मण्यस्वामी ही हैं!' उन्होंने अपने आप को समझाया।

घर लौटते ही उन्होंने अपनी पत्नी से कहा कि, इतने दिन हमें लग रहा था कि मेरे भाई को विद्या ग्रहण करने में रुचि नहीं, और वह तो एक मूर्ख है। नहीं - नहीं! वह तो साक्षात् कुमार कार्तिकेय (सुब्रह्मण्यस्वामी) का रूप ही है। इसमें संदेह करने की कोई आवश्यकता नहीं। उन्हें दुःख और पश्चात्ताप हो रहा था कि ऐसे अनुज को मैं ने कैसे सताया है। अपने अज्ञान को वे कोसने लगे। दुःखी मन से संतप्त हो रहे थे।

चेन्नै के आसपास तिरुवत्तियूर नामक प्रदेश में 'पट्टणत्तार' नामक एक सिद्ध पुरुष ने समाधि पाई थी। वहाँ 'त्यागेशस्वामी' का मंदिर है जो दक्षिण भारत के प्रसिद्ध शैव क्षेत्रों में से एक है। रामलिंगस्वामी नित्य प्रति तिरुवत्तियूर में विराजमान भगवान त्यागेश का दर्शन कर, आशु रूप से कविता पुष्पों से अर्चना करने लगे। उपस्थित भक्तगणों को इसे देख आनंद और आश्चर्य होता था।

रामलिंगस्वामी का पहनावा भी कुछ विलक्षण ही था। श्वेत वस्त्र को वे घुटनों के ऊपर से धारण करते थे। ज्ञान ज्योति के समान प्रकाशमान शरीर को मानो अन्यों से छिपाने की रीति में उनका वस्त्र धारण रहता था। उसी वस्त्र से वे सिर भी ढकते थे। अनावश्यक वार्तालाय करना, ढोंग करना वे कभी नहीं करते थे। अहंकार का लेश मात्र भी प्रदर्शन न करना, विनम्रभाव से चलना - रामलिंगस्वामी के सहज स्वाभाविक गुण थे।

रामलिंगमजी एक अच्छे कवि भी थे। बचपन से ही वे अद्भुत भक्ति भाव से भरे गीत और आध्यात्मिक साहित्य को बड़ी सरलता से गा - गाकर, उन्हें पुस्तकों के आकार में भक्तों को प्रसादित करने वाले प्रसन्न कवि थे। स्पष्टता, सरलता और पाठकों को आकर्षित कर सकने का प्रसादगुण, उनकी रचनाओं में आरंभ से अंत तक देखा जा सकता है।

एक बार तोलुवूर वेलायुधमोदलि नामक कवि का आगमन हुआ, जो बड़ा ही घमंड़ी था। कठिन शब्दों का प्रयोग करते हुए, श्लेष से भरपूर एक रचना के साथ रामलिंगम के पास आया। उसने रामलिंगस्वामी से अनुरोध किया कि यह प्राचीन संगम कालीन कवि की रचना है, कृपया आप इसे परखें। रामलिंगमजी उस रचना के आरंभिक कविताओं को देखते ही उस रचना के दोष, उसकी अव्यस्थता और असंबद्धता के कारण पहचान लिया कि यह रचना प्राचीन संगम कवियों में से किसी की भी नहीं है। उन्होंने कहा - 'महोदय! यह संगम कालीन कवियों की रचना नहीं है। इसके दोष स्वयं आप भी देख सकते हैं। कहना चाहिए कि इसके लेखक को न भाषा के लक्षणों की जानकारी है, और न ही छन्द के नियमों का!' इसे सुनते ही वेलायुधमोदलि ने उनके चरणों पर गिरकर क्षमा याचना की। बाद में उनका शिष्य बन, आदर का पात्र बना। तत्कालीन कई महान पंड़ित, कवि और भक्तगणों ने रामलिंगस्वामी जी से ज्ञानोपदेश पाया था। इस प्रकार से उनका यश, तमिल प्रदेश की चारों दिशाओं में व्याप्त हुआ था।

कांचीपुरम सभापति मोदलियार के बारे में हमने पहले ही सुन रखा है। वे सभापति पिल्लै के गुरु थे। उन्होंने रामलिंगस्वामी की प्रतिभा को भलीभांति पहचाना और उनसे अनुरोध - किया कि मनु नामक राजा की

जीवनी को सुबोध शैली में बच्चों के पढ़ने योग्य ग्रंथ की रचना करें। सभापति के अनुरोध पर रामलिंगम जी ने बच्चों के साथ - साथ बड़ों के लिए भी उपयुक्त, जीवों के प्रति करुणा दिखाने की प्रशस्ति का गान करने वाला काव्य - 'मनुमुरै कंडवाचकम्' नामक काव्य - को रचा।

एक दिन, रामलिंगस्वामी, तिरुवत्तियूर में स्थित त्यागेश स्वामी की आराधना कर, घर लौटने का कार्यक्रम बनाया था। किन्तु, रात हो जाने के कारण वहाँ की धर्मशाला में ही सो गए। उनके कानों में सोने की बालियाँ थीं। वे बाई ओर करवट लेकर सो रहे थे। इसे देख एक चोर, उनके दाएँ कान की बाली चुराने लगा। रामलिंगमजी ने सोचा कि इस चोर को दूसरी बाली भी मिलनी चाहिए। अतः उन्होंने बाईं ओर करवट लेकर, चोर को दूसरी बाली भी पाने में सहायता की।

एक बार, देवदर्शन के पश्चात् वाहन मंटप में रामलिंगम जी ऐसे ध्यान लगा कर बैठ गए कि भोजन करना भी भूल गए। पुजारियों ने इन पर ध्यान नहीं दिया और मंदिर के द्वार पर ताला लगाकर चल दिए। कुछ समय बीतने के बाद ध्यान से उठे रामलिंगम जी को बहुत भूख लग रही थी। उस आधी रात के समय किसी एक पुजारी ने आकर उन्हें भगवान का प्रसाद खिलाया।

वैसे रामलिंगस्वामी शिव भक्त थे। सभी का यही विचार था कि उन्हें शिवभक्ति से संबंधित विषयों के अलावा किसी और के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। एक बार कुछ वैष्णव भक्तों ने उन्हें वैष्णव धर्म के बारे में जानकारी देने का अनुरोध किया। इस पर रामलिंगमजी ने वैष्णव ग्रन्थों से अनेकानेक उद्धरणों को बड़ी रोचक ढंग से प्रस्तुत कर, उन वैष्णवों को प्रसन्न किया। उस दिन से लोगों की समझ में यह बात आयी

कि रामलिंगमजी, केवल शैव धर्म के ही नहीं बल्कि सभी धर्मों की विशेषताओं के भी ज्ञाता हैं। अतः उनके प्रति लोगों के मन में श्रद्धा और बढ़ गई।

रामलिंगमजी को धन के प्रति कोई लगाव नहीं था। धनी व्यक्तियों के पास जाकर उनके अनुग्रह के लिए अथवा धन पाने के लिए उनकी झूठी प्रशंसा करना इन्होंने कभी नहीं किया। इनके पुराण प्रवचनों पर संतुष्ट होकर जब धन भेंट किया जाता था, तो रामलिंगमजी उस धन को घरों पर, राहों पर बिखेर देते थे। इसे जानने के बाद लोग, उनके भाई सभापति पिल्लै के हाथों में भेंट सौंप कर संतुष्ट होते थे।

रामलिंगमजी ने कभी किसी के सामने हाथ नहीं पसारा था। एक बार एक गरीब व्यक्ति ने आकर कहा 'रामलिंगमजी किसी धनवान व्यक्ति को मेरा नाम सिफारिश कीजिए और मुझे इस संकट से बचाइए!' उन्होंने उस व्यक्ति को समझाया कि धन की याचना करना बहुत तुच्छ बात है और मैं यह नहीं कर सकता!

रामलिंगमजी विवाह करना नहीं चाहते थे। किन्तु उनकी माँ, भाई - भाभी और निकट के संबंधियों के साथ साथ घर आए कुछ साधु - सन्तों ने भी समझा - बुझाया, और उनका विवाह, उनकी भानजी धनकोटम्मा से करवा दिया (दक्षिण भारत में मामा के साथ भांजियों का विवाह करने की प्रथा है)। आध्यात्मिक ज्ञान के आनंद में डुबकी लगाने वाले रामलिंगमजी को यह वैवाहिक बन्धन कतई अच्छा नहीं लगा। पत्नी के साथ रहने पर भी उन्होंने कभी उसके बारे में नहीं सोचा। 'तिरुवाचकम्' नामक शैव धर्मग्रन्थ के अध्ययन में ही उनका समय बीतता था। जगत कल्याण के लिए अवतरित दिव्य पुरुषों की जीवन शैली अलग रहती है!

'तिरुवत्तियूर पट्टिनत्तार' मंदिर के समीप कई वर्षों से अपनी सेवा प्रदान करने वाली एक वृद्धा ने रामलिंगमजी के पास आकर विनती की कि - 'मुझे दिशा निर्देश करते हुए आशीर्वाद देना!' रामलिंगमजी ने मुस्कराते हुए मुट्ठी भर मिट्टी निकाली और वृद्धा के हाथ में डालते हुए कहा - 'तुम्हारे लिए यही दिशा निर्देशन है!' थोडी ही देर में मिट्टी को शिवलिंग का आकार धारण करते देख, उस वृद्धा के लिए आनंद और आश्चर्य की सीमा नहीं रही। वहाँ उपस्थित भक्त जनों के समक्ष बार-बार उसे रामलिंगमजी की महिमा का गान करते थकान नहीं हो रही थी।

तिरुवत्तियूर में गेरुआँ वस्त्र धारी एक साधु, कुछ दिनों से एक घर के चबूतरे पर बैठकर अपने आपमें कुछ बड़बड़ाते गोचर होने लगा। उधर से आते - जाते लोगों को देखते हुए कहता था - 'वह देख! जानवर कैसे जा रहे हैं। यह देख कुत्ता, वह देख भैंस, इधर देख भेड़ - बकरियाँ!' पथिकों को लगता था कि यह हमारा अपहास्य कर रहा है। एक दिन उसी मार्ग पर रामलिंगमस्वामी जा रहे थे, जिन्हें देखकर उस साधु ने चिल्लाया - 'यह देखो! एक सत्पुरुष जा रहा है!' रामलिंगमजी उसके पास जाकर खड़े हुए और कुछ देर वार्तालाप कर चल दिए। बस, उसके बाद साधु, गाँव छोड़कर चला गया। तब उस संन्यासी के शब्दों में छिपे गूढ़ार्थ पर लोग सोचने लगे तो उन्हें अवगत हुआ कि शायद यह सन्यासी, मनुष्यों को जन्तु, उत्तम मानव और दिव्य जनों की श्रेणियों में विभाजित करता रहा होगा।

एक दिन रामलिंगम चेन्नै के 'व्यासरपाड़ि' नामक प्रदेश से अपना प्रवचन पूरा कर अपने मित्र और भक्तमंडलि के साथ लौट रहे थे। मार्ग पर एक बड़ा साँप रेंगता आ रहा था। उनके साथी भय के कारण इधर

- उधर तितर-बितर होकर दौड़ने लगे। किन्तु रामलिंगम निश्चल खड़े रहे और उन्होंने सीधा सर्प की ओर देखा। साँप उनके पैरों से लिपट गया। कुछ देर बाद जब उन्होंने कहा - 'बस! अब चले जाओ', तो साँप वहाँ से सरसर निकल कर गायब हो गया।

एक बार एक धनिक व्यक्ति ने अपने घर में संपन्न हो रहे विवाह का न्यौता सभी को दिया था। विवाह की तैयारियाँ बहुत शानदार ढंग से हो रही थी। रामलिंगमजी को भी निमंत्रण भेजा गया। अतिथिगण अपनी - अपनी संपत्ति और वैभव के अनुसार वस्त्रधारण कर, यथोचित वाहनों पर सवार होकर विवाह में पहुँचे। वहाँ पहुँचे रामलिंगमजी ने देखा कि लोग कैसे चमक - धमक के साथ वस्त्र और आभूषण पहन कर आए, तरह - तरह की सवारियों में आए हैं। चोरों ओर कोलाहलपूर्ण वातावरण छा गया था, जिसे देख उन्होंने अनुभव किया कि यह मेरे लिए अनुकूल नहीं है। अतः वे मंडप से निकलकर बाहर के चबूतरे पर बैठ गए। विवाह के उत्साह में मग्न लोगों का ध्यान इस ओर नहीं गया। थोड़ी देर बाद किसी ने उन्हें देखा और जाकर यजमान को सूचित किया कि रामलिंगमजी विवाह मंडप के बाहर चबूतरे पर बैठे हुए हैं। यजमान उनसे कारण पूछने जा ही रहे थे कि एक बालक के हाथों से स्वामी ने एक कागज के टुकड़े पर इस प्रकार लिखकर भिजवाया -

'चप्पल नहीं, सफेद कुर्ता नहीं, बढ़िया धोती नहीं, न काम काज
न धन है, न शारीरिक बल है,
न घर है, ऐसे में विवाह में जाने का मन कैसा करे?'

इसे पढ़कर यजमान ने प्रण किया कि

'आज के बाद दिखावे को अपने आसपास फटकने नहीं दूँगा।' उसके बाद रामलिगंमजी का आशीर्वाद पाकर सन्मार्ग पर अग्रसर हुआ।

एक बार, रामलिंगमजी तिरुवत्तियूर में स्थित भगवान का दर्शन कर, वापस बहन के घर पहुँचने में काफी देर हो गई। बहन के साथ - साथ परिवार के अन्य सदस्य भोजन करने के लिए रामलिंगमजी की प्रतीक्षा करते बैठे। काफी रात बीतने के बाद उन्होंने निश्चय कर लिया कि रामलिंगमजी के आने पर किवाड़ खोल सकते हैं, और वे सो गए। बहुत देर से आए रामलिंगमजी को परिवार के सदस्यों को उठाने का मन नहीं हुआ और भूखे पेट ही बाहर के चबूतरे पर सो गए। अपने पुत्र रामलिंगम की भूख मिटाने साक्षात् विश्व की जननी अन्नपूर्णा ने रामलिंगम की बहन बनकर आयी और खाना खिलाया। रामलिंगमजी को लगा कि मेरा आगमन देखकर मेरी बहन ने कितने प्यार से मुझे यहीं पर खाना ले आकर परोसा! खाने के बाद उनकी आँख लग गई।

कुछ देर बाद उनकी बहन ने व्याकुल मन से बाहर आकर देखा तो चबूतरे पर सो रहा भाई दिखा। बहन ने बड़े प्यार से अपने भाई को जगाया और खाना खाने अंदर चलने को कहा। रामलिंगमजी को आश्चर्य हुआ कि बहन ने अभी-अभी मुझे खाना खिलाया था। उन्होंने कहा - 'दीदी! अभी तो तुमने मुझे केले के पत्ते में खाना खिलाया था। यह देखो झूठा पत्तल भी अभी यहीं पर पड़ा है। इतनी भुलक्कड़ कैसे बन गई हो?' अब बहन को समझ में आया कि देवस्वरूप रामलिंगम को स्वयं माता अन्नपूर्णा ने ही भोजन परोसा है। मेरा भाई कितना भाग्यशाली है! सोचकर उन्हें आनंद मिला।

ऐसी कई चमत्कारपूर्ण घटनाएँ रामलिंगमजी के जीवन काल में घटी। चेन्नै में स्थित सभी मंदिरों के दर्शन उन्होंने किया था। जहाँ - जहाँ के मंदिर शिथिलावस्था में दिखीं, उन सबका उन्होंने जीर्णोद्धार करवाया था। उनमें पूजा आदि कार्यक्रमों का पुनरुद्धार भी करवाया। आदिशंकराचार्य जी के समान रामलिंगमजी भी जिस किसी मंदिर या क्षेत्र दर्शन करने निकले थे, वहाँ विराजमान देवी - देवताओं की स्तुति किया करते थे। आशुरूप से भक्तिभाव से ओतप्रोत कई गीत, कविताएँ और स्तोत्र उनके मुख से बड़े सहज ही निकल पड़ते थे।

कुछ समय के पश्चात् रामलिंगमजी की माता का स्वर्गवास हो गया था और उसी अवधि में उनके छोटे भाई परशुराम पिल्लै भी अस्वस्थ होता गया। शारीरिक रूप से दिन प्रति दिन परशुराम की अस्वस्थता बढ़ती जा रही थी। इस रुग्णावस्था में उसने चिदंबरम में स्थित भगवान नटराज के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। अपने भाई की इच्छा प्राप्ति के लिए वे उसे साथ लेकर निकले। मार्ग में पड़ने वाले अनेक मंदिरों के दर्शन करते हुए, थोड़े दिनों के लिए उन्होंने पुदुच्चेरी में विश्राम किया। रामलिंगमजी के कुछ आत्मीय शिष्यगण भी इस तीर्थयात्रा में उनके साथ थे। पुदुच्चेरी में वास करते समय रामलिंगमजी ने दर्शकों के संदेहों का निवारण करते हुए, उन्हें - वेदांत के रहस्यों से अवगत कराने के कारण, पुदुच्चेरी में खूब यश कमाया था। रामलिंगमजी थोड़े दिनों के बाद अपने भाई और मित्रमंड़ली के साथ - चिदंबरम पहुँचे। सर्व प्रथम नटराज के दर्शन करने के पश्चात् अन्य देवी - देवताओं के भी दर्शन कर, उनकी प्रशस्ति में सुन्दर भक्ति गीत की मालाओं को पिरोया। वापस चिदंबरम पहुँचने के बाद अपनी बृहदाकार रचना ''अरुट्पा'' (अनुग्रह गीतांजली) के चौथे अध्याय की रचना पूरी की।

रामलिंगमजी चिदंबरम में वास करते समय, वहाँ के प्रसिद्ध व्यक्ति कोड़न नल्लूर सुन्दरस्वामी नामक एक सिद्ध पुरुष का दर्शन कर, उन पर आशु कविताएँ और गीत गाकर, रामलिंगमजी 'करुंगुलि' नामक एक सिद्ध पुरुष के दर्शन करने की इच्छा से अपने शिष्यों को आदेश दिया कि सुन्दरस्वामी से मेरी भेंटवार्ता के लिए समय निर्धारित करें। अपने गुरु के आदेशों का पालन करते हुए शिष्यों ने सुन्दरस्वामी को सूचित किया तो उन्होंने बड़े भक्तिभाव से कहा - 'क्या उनके जैसे महात्मा मेरे पास आना चाहते हैं? यह तो मेरी ओर से महान अपराध ही होगा। मैं स्वयं उनके दर्शन करने चलूँगा!' तुरन्त अपने शिष्यों के साथ रामलिंगमजी के पास चल दिए। उचित आदर - सत्कार हुआ। वे दोनों महानुभाव तीन दिनों तक आध्यात्मिक विषयों के बारे में गंभीर चर्चा में मग्न रहे। सुन्दरस्वामी को रामलिंगमजी के प्रति विशेष आदर था तो रामलिंगमजी को उनके प्रति विशेष प्यार! इस भेंट के पश्चात् सुन्दरस्वामी ने जाने की अनुमति लेकर वहाँ से निकल पड़े। रामलिंगमजी की आँखों से आँसू बहते देख, शिष्यों ने कारण पूछा। उन्होंने बड़े दुःखी होकर बताया कि - 'ऐसे महान व्यक्ति, सकल विद्याओं में पारंगत महापुरुष छः माहों के पश्चात् हमसे दूर होने वाले हैं!' भविष्य वाणी करने में निष्णात रामलिंगमजी का कथन सत्य निकला।

चिदंबरम से शीर्गालि, वैदीश्वरन कोइल और मदुरै में विराजमान देवी - देवताओं के दर्शन कर, उन पर आशु कविताएँ और गीत गाकर, रामलिंगमजी करुंगुलि नामक गाँव पहुँचे। वहाँ के एक भक्त वेंकटरेड्डी ने रामलिंगमजी के ठहरने के लिए प्रबंध किया। वहाँ रात भर पानी से दीपक को प्रज्ञवलित रखकर, रामलिंगमजी ने सारे गाँववालों को आश्चर्य

में डाल दिया। तब से उनकी महिमाओं को आसपास के लोग भी जानने लगे। इस प्रसिद्धि के बाद वेंकटरेड्डी के घर, भक्तों का आवागमन बड़ी संख्या में होने लगी। करुंगुलि की यह घटना हमें शिर्डी के साईबाबा से पानी से दीपों को प्रज्ज्वलित करने की घटना का स्मरण दिलाती है।

रामलिंगमजी की ऐसी अनगिनत लीलाएँ हैं। श्री सत्यसाईबाबा जी का कथन है कि दिव्य पुरुष समय - समय पर कुछ चमत्कार दिखाकर, भक्तों में संस्कार जगाते हैं और उन्हें परमात्मा के दर्शन कर सकने योग्य बनाते हैं।

मदुरै में श्रीज्ञानसंबंधर के मठ में विरागी बन आए करुंगुलि गाँव के पुरुषोत्तम रेड्डी को उनके माता - पिता के इच्छानुसार घर वापस बुलाने की घटना, गर्व और अहंकार से भरे पंडित और अवधानियों को सही मार्ग पर लाने की घटना करुंगुलि परुषोत्तम रेड्डी के मामा बालुरेड्डी को कुष्ठरोग से मुक्ति दिलाना जैसी घटनाएं सुनकर हमारा मन पुलकित होता है। बीमारी से - मुत्तु नारायण रेड्डी की आँखों की ज्योति, जो चली गई थी, रामलिंगमजी की महिमा के कारण पुनः प्रकाश भरने वाले रामलिंगमजी के प्रति कृतज्ञता को दर्शाने के लिए मुत्तु नारायण रेड्डी ने अत्यंत भक्ति भाव से उन्हें अपनी पूरी संपत्ति को समर्पित करना चाहा। रामलिंगमजी ने मना करते हुए कहा - 'मुझे संपत्ति से क्या लेना - देना? उस धन का उपयोग यहाँ मंदिर में विराजमान भगवान श्रीनिवास के लिए करना।' उनके आदेशानुसार मुत्तु नारायण रेड्डी ने अपनी पूरी संपत्ति का दान कर दिया था।

रामलिंगमजी चेन्नै से निकल कर काफी दिन हो गए। उनके मित्र मुत्तुस्वामी ने सोचा कि अपने विवाह के अवसर पर पधार कर मुझे

अनुग्रहीत करेंगे। विवाह का दिन निकट आने के बाद भी, किसी न किसी कारण वहाँ चेन्नै आना टलता जा रहा था। रामलिंगमजी अपनी अलौकिक दृष्टि से जान गए कि अब मेरा उस विवाह में जाना असंभव है। अतः उन्होंने एक ''पद्ममालिका'' की रचना कर अपने शिष्य श्रीनिवास वरदाचारी से विवाह के अवसर पर भेंट देने के लिए भिजवाया, जो अपने आप में एक अनोखा उपहार था। उस रचना का शीर्षक उन्होंने 'पारिवारिक दुःख' दिया था, जिसमें उन्होंने कई दार्शनिक अंशों के साथ - साथ मनुष्य के दैनिक जीनव में उठाये जाने वाले दुःखों का प्रतीकात्मक शैली में ४१२ चरणों की कविता माला में चित्रित किया था। उन्होंने अपने मित्र को विवाह की शुभकामनाएँ दीं और इसमें सम्मिलित न होने के कारण दुःखी न होने का संदेश भिजवाया। इस संदेश के माध्यम से मनुष्य जीवन के लिए उपयुक्त आध्यात्मिक संपत्ति का वितरण हुआ। इस तथ्य से अवगत होकर मुत्तुस्वामी ने उसे कण्ठस्थ किया और नियमित रूप से हर दिन पारायण करने लगा। यह विधि पीढी दर पीढ़ी आगे बढ़ते हुए कंचि नागलिंगम तक बिना किसी अवरोध से चलती आयी।

रामलिंगमजी करुंगुलि में १६ वर्ष तक रहे। उनकी कई महिमाएँ भी प्रदर्शित हुईं। महान कार्य भी संपन्न हुए। उन्होंने अपने अभियान को 'समरस सन्मार्ग' का नाम दिया। जाति, कुल, आदि वर्ग भेदों से परे, परम आदरणीय, सभी से आकांक्षित परम तत्व था। करुंगुलि से रामलिंगस्वामी जी अप्पारेड्डी के निमंत्रण पर कड़लूर पहुँचे।

एक दिन कड़लूर में शेट्टी जी के कदली वन में सैर करते समय रामलिंगमजी को एक साँप ने डंस लिया। साथियों में से कुछ लोग उनकी

चिकित्सा के लिए चिन्तित थे तो कुछ लोग साँप को मारने के लिए आतुर थे। किन्तु उन्होंने मना करते हुए कहा - 'मुझे कुछ नहीं होगा। न चिकित्सक की आवश्यकता है और न ही उस साँप को मारने की। अब उसका अंतकाल समीप आ जाने के ही कारण उसने मुझे डसा। अतः उसे मारने की कोई आवश्यकता नहीं!' थोडी ही देर में साँप मर गया और पेड़ से नीचे गिरा और उनके पैरों के पास मरा पड़ा। कैसा अद्भुत!

गूड़लूर में प्रतिदिन अपने भक्तों को नियमित रूप से आध्यात्मिक तत्व और समरस सन्मार्ग का उपदेश देते हुए हजारों भक्तों के हृदयों में रामलिंगमजी ने अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया था। ये प्रवचन देर रात तक चलते थे। हर दिन, उनके प्रवचन सुनने गूड़लूर के आसपास स्थित मंजुकुप्पम नामक प्रदेश से रामकृष्ण पिल्लै आता था। कार्यक्रम की समाप्ति के बाद उसे अकेले ही मंजुकुप्पम अंधेरे में वापस जाना पड़ता था। उस सूनसान मार्ग पर चलते समय उसे कभी - कभी डर भी लगता था। ऐसे समय, उस राह पर एक व्यक्ति अपने हाथ में मशाल लेकर आगे - आगे चलता था। जैसे ही रामकृष्ण के मन से डर दूर हो जाता, वैसे ही वह मशालधारी व्यक्ति को भी अदृश्य होते देख, वह समझ नहीं पाया कि हो क्या रहा है! वह है कौन? क्यों मशाल लेकर आ रहा है? इन प्रश्नों का उत्तर पाने वह रामलिंगमजी के पास गया। सुनकर उन्होंने बड़े भोले - भाले स्वर में उत्तर दिया - 'बड़े आश्चर्य की बात है। सब ऊपर वाले की लीला!' मानो, उन्हें कुछ नहीं पता!

गूड़लूर के निकट 'तिरुप्पादि पुलमर' नामक दिव्य क्षेत्र में बड़े वैभव के साथ प्रति वर्ष उत्सव संपन्न होते थे। उस वर्ष को, ब्रह्मसमाज

के अनुयायी, कई लोगों को साथ लेकर अपने विचारों का और ज्यादा प्रभावशाली ढंग से प्रचार करने के लिए वहाँ पहुँचे। श्रीधर नामक व्यक्ति के नेतृत्व में यह प्रचार, एक आंदोलन के रूप में बढ़ा। मूर्ति पूजा का खंडन करते हुए, उसे अज्ञानी लोगों की चेष्टा तथा उसे अंधविश्वास ठहरा कर, उसका निषेध - करवाने का अनवरत प्रयास करके उस विषय पर निरंतर भाषण दिया करते थे।

रामलिंगमजी को अपने शिष्यों से इसकी सूचना प्राप्त हुई। उन्होंने ब्रह्मसमाजियों को एक पत्र लिखा कि - 'मूर्ति पूजा का खण्ड़न करना उचित नहीं। क्योंकि अनादि काल से कई महान व्यक्तियों ने मंदिरों का निर्माण करवाकर, उनमें श्रेष्ठ मूर्तियों को प्रतिष्ठित करवाया है। इसके माध्यम से उन्होंने मनुष्य से उत्तम स्थान प्राप्ति के लिए मार्ग निर्देशित किया था। अतः आप अपने प्रचार में इस मूर्ति पूजा के खण्डन को रोको।' इस पत्र का उत्तर देने के लिए समाजियों के पास कोई ठोस तर्क नहीं था। केवल चार वाक्य, नाम के वास्ते लिखवाकर भेजा! किन्तु उनका प्रचार तो बड़ी मात्रा में चल ही रहा था। भाषणों का स्वरूप भी नहीं बदला। विशेषकर श्रीधर नायक के प्रभावशाली भाषण लोगों को सोचने पर मजबूर किया कि यह तो आदिम मानव के आचार - व्यवहार के प्रतीक के रूप में बच गया है, जिसे आगे बढाने में कोई अर्थ ही नहीं। उन्हें लग रहा था कि इस मूर्ति पूजा का विसर्जन कर देना ही आध्यात्मिक प्रगति का द्योतक है।

इस अभियान को देख, रामलिंगमजी ने अनुभव किया कि इन संदेहों का निवारण कर, उन्हें सन्मार्ग पर लाने की बहुत बड़ी आवश्यकता है। ब्रह्मसमाजियों को रोकने के लिए उनके नेता श्रीधर से वाद - विवाद

करने रामलिंगमजी तैयार हुए। दोनों एक ही मंच पर आमने - सामने बैठ कर अपने - अपने तर्क प्रस्तुत करने लगे। ज्ञानियों के लिए भले ही मूर्ति पूजा की आवश्यकता न पड़े, किन्तु साधारण व्यक्तियों के लिए तो भक्ति का ही मार्ग सरल होता है और इस मार्ग पर अग्रसर होने के लिए मूर्ति पूजा का विशेष महत्व होता ही है। मन की पकड़ में न आने वाले परब्रह्म तत्व की आराधना करने के लिए मूर्ति पूजा एक उत्तम साधन सिद्ध होता है। प्राचीन काल से विज्ञों का यही मानना था कि मूर्ति पूजा और सत्कर्मों के आचारण, भक्ति के आरंभिक सोपान हैं, जिनके माध्यम से ज्ञान की प्राप्ति कर मानव, स्वयं माधव बन सकता है।

इसके प्रत्युत्तर में श्रीधर ने अपने विचारों को काफी प्रभावशाली ढंग से ही प्रस्तुत किया था, फिर भी सारे वाद - विवाद और संवाद के पश्चात् अंतिम विजय तो रामलिंगमजी का ही रहा। स्थिति ऐसी आई कि श्रीधर को एक बिन्दु पर आने के बाद कहना ही पड़ा कि - 'महोदय! इस विवाद को हम यहीं पर स्थागित कर देंगे। मेरे विचारों को मैं पत्र के माध्यम से आपको लिखकर भेजूँगा!' यह कहकर निकल पड़ा।

भक्तों को भी अब समझ में आया कि 'विग्रह' अर्थात् मूर्ति का अर्थ 'विशेष स्थान' है और मूर्ति की पूजा, परमात्मा के देह होने के भाव से उपासना करेंगे तो अवश्य ज्ञान का उदय होगा। संतुष्ट होकर भक्त गण वहाँ से चल दिए।

गूड़लूर में एक दिन रामलिंगमजी के दर्शन करने अप्पशेट्टी के घर पंडितों की एक मंडली पहुँची।

रामलिंगमजी के वहाँ पहुँचने की अवधि में प्रतीक्षारत पंडितों में से एक ने गोष्ठी का आरंभ - करते हुए प्रतिपादित किया कि - 'ईश्वर के

आदेश के बिना चींटी भी नहीं काटती! अतः सब कुछ परमात्मा के अधीन ही रहता है।' दूसरे विद्वान ने इसका खण्डन करते हुए कहा कि - 'हमारे कर्मों का उत्तरदायित्व हम पर ही रहता है। सब कुछ परमात्मा के अधीन कर देना अनुचित है! अतः इस संसार में प्राप्त होने वाले सुख - दुःखों का कारण स्वयं जीव होता है, न कि परमात्मा!' अपने इस अभिमत को उन्होंने बड़े गंभीर रूप में प्रस्तुत किया था। दोनों दल अपने - अपने मत का समर्थन करते हुए वाद - विवाद में मग्न थे। उसी समय वहाँ रामलिंगमजी का आगमन हुआ। उन्हें पता था कि किस विषय पर वहाँ विवाद चल रहा है। अतः उन्होंने - दिगंबर सन्यासी, उन्हें केले देनेवाला, उन्हें पत्थर से मारने वाला तथा इन तीनों को न्यायाधीश के पास ले जाकर न्याय दिलवानेवाले की कहानी सुनाई। उन्होंने एक छोटी सी कविता में बड़ी चतुरता के साथ कहा कि - 'बुद्धिमान और भेद रहित व्यक्ति अपने सारे कर्मों का कारण दैव को मानते हैं, जबकि भेद गुणी लोग, इस संसार में सदा जीवों को ही कारण मानते हैं।'

इस कथन को सुन श्रोतागण अत्यंत प्रसन्न हुए और रामलिंगमजी की भूरि - भूरि प्रशंसा की।

एक दिन, जब वे अप्पाशेट्टी के घर ठहरे थे, रात के समय एक अपरिचित व्यक्ति का अंदर आगमन हुआ। चबूतरे पर बैठे लोगों ने इसे देखा! बिना किसी की अनुमति लिए, किसी आगंतुक का इस प्रकार से अंदर घुसना, उन्हें 'ठीक नहीं' लगा। अतः सब के सब, घर के अंदर पहुँच गए और उस अनजान व्यक्ति को ढूँढने लगे। जब वह कहीं नहीं दिखा तो उन्होंने रामलिंगमजी से बात बताई। इस पर उन्होंने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया - 'वे एक सिद्ध पुरुष हैं, जो मुझ से मिलने आए थे। अब

तक वे वारणासी पहुँच गए होंगे। यह लीजिए उनसे दिया गया लड्डू!'कहते हुए उन्होंने वहाँ उपस्थित लोगों में लड्डू प्रसाद बाँटने लगे।

वेंकटसुब्बय्या, मंजुकुप्पम के तहसीलदार थे। उन दिनों में जब तहसीलदार का किसी गाँव में सरकारी काम से जाना होता था तो, उनके आगमन की सूचना उस गाँव के किसान, कर्मचारी तथा अन्यों को देने के लिए, गाँव के कई मील पहले से ही, तहसीलदार की गाड़ी के आगे - आगे तुरई बजाते हुए एक आदमी को दौड़ते हुए आना पड़ता था। एक दिन तहसीलदार, रामलिंगमजी का दर्शन कर, उनके समरस सन्मार्ग के प्रवचन सुनने उनके निकट बैठा था। उस दिन वेंकटसुब्बय्या की गाड़ी के आगे सीटी बजाता आया आदमी खाली पेट ही काम पर आ जाने के कारण पसीने से तरबतर हो रहा था। वह रामलिंगमजी के आवास के समीप शिथिल होकर बैठ गया। करुणा की मूर्ति रामलिंगमजी, इस हृदय को द्रवित करने वाले दृश्य को देख बहुत दुःखी हो गए। अपने सामने निर्लिप्त बैठे तहसीलदार से उन्होंने पूछा - 'तुम गाड़ी में आराम से बैठ कर आते हो और तुम्हारी गाड़ी के आगे - आगे तुम जैसे भूखे - प्यासे एक आदमी को दोड़ाना कहाँ तक उचित है? अब आगे से इस निरंकुश प्रथा को समाप्त करनी चाहिए।' यों समझाकर उन्होंने तहसीलदार के मन के अंदर की करुणा को जगाने का प्रयत्न किया। उसके बाद से तहसीलदार ने अपने गम्यस्थान पहुँचने से पहले कम दूरी पहले से सीटी बजवाने की प्रथा आरंभ की।

एक और घटना को देखें। एक बार 'पिन्नलूर' नामक प्रदेश से रामलिंगमजी कुछ गंभीर विचार में डूबे हुए चल रहे थे। उधर से जाते समय, पुराण - प्रवचन करनेवाले वेंबय्या ने उनसे प्रश्न किया - 'महोदय!

आप कौन हैं?' रामलिंगमजी का उत्तर था - 'मैं नील का सौदागर हूँ?' वेंबय्या को आश्चर्य हुआ कि यह अनोखा व्यापारी कौन हो सकता है। इसका मर्म जानने के लिए वेंबय्या ने रामलिंगमजी से दुबारा प्रश्न करना चाहा, किन्तु वे अचानक वहाँ से अदृश्य हो गए। वेंबय्या ने अनुभव किया कि वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं हो सकता है। वेंबय्या ने उस उत्तर पर ध्यान लगाकर सोचने लगा कि यह 'नील का सौदागर' कौन हो सकता है? सोचते - सोचते उन्हें लगा कि नील का अर्थ 'अज्ञान', 'कालापन' या 'माया' से जुड़ा है। नील का व्यापारी अर्थात् गाँव - गाँव जाकर मनुष्यों से अज्ञान को खरीदने वाला! उनके उत्तर से कितना गंभीर और गूढ़ भाव व्यक्त हो रहा है।

हमारे पास उनके दैनिक जीवन में घटी ऐसे कई चमत्कारों का अथवा लीलाओं का पूरा ब्यौरा नहीं है। वेट्टवलम् के जमीन्दार अप्पास्वामी पंडारी की दो पत्नियाँ थीं। उनकी बड़ी पत्नी मानसिक अस्वस्थता से पीड़ित थी। कहा जाता था उस महिला को ब्रह्मराक्षस सताता है। इसीलिए वह अपनी अस्वाभाविक चेष्टाओं से पति तथा पारिवारिक सदस्यों को डराती हुई सता रही है। दूसरी पत्नी महोदर नामक उदर संबंधी रोग से पीडित थी। अपनी दोनों पत्नियों के स्वास्थ्य के लिए जमीन्दार काफी प्रयास कर रहे थे और अत्यधिक चिन्तित भी थे। विभिन्न प्रकार की चिकित्साएँ करवाने के साथ - साथ सभी देवी - देवताओं का पूजा - पाठ करना भी चल रहा था। यहाँ तक कि ओझाओं को बुलाकर मंत्र - तंत्र का भी सहारा ले चुके थे, किन्तु असफल ही रहे। ऐसे में उन्होंने रामलिंगमजी के चमत्कारों के बारे में सुना। तुरन्त उनकी शरण में जाकर अपने घर बुलाया। उन्हें पत्नियों का स्वास्थ्य लाभ में मिला। तब से

जमीन्दार, रामलिंगमजी को अपने कुल देवता मानते हुए उनकी आराधना करने लगे। उनकी मृत्यु के बाद, उनके वंशज आज भी रामलिंगमजी की आराधना करते आ रहे हैं।

उसी प्रदेश के वासी श्री कल्लुपट्टि अय्यर नामक सज्ञन ने श्रीरामलिंगम से विनती की कि मुझे ज्ञान का उपदेश देकर मेरा उद्धार कीजिए। इस पर श्रीरामलिंगमजी ने उसे अपने संग रहने का आदेश दिया। वेट्टवलम् गाँव से लौटते समय उस सज्ञन को भी अपने साथ ले गए और वडलूर पहुँच कर उसे आश्रय दिया था। अय्यरजी की मनोकामना पूरी हुई और उनका जीवन धन्य हो गया।

वड़लूर में वास करते समय रामलिंगमजी के मन में एक विचार आया। उन्हें लगा कि आश्रम आने वाले भक्तों के लिए भोजन और आवास की सुविधा नहीं होने के कारण, उन भक्तों को बहुत दिक्कत हो रही है। दिन - प्रतिदिन भक्तों की संख्या बढ़ती जा रही है। अतः उनके भोजन और आवास की व्यवस्था करनी चाहिए। अपने पास आनेवाले धनवान व्यक्तियों से, शिष्यों से और हितैषियों से उन्होंने इसके बारे में विचार - विमर्श किया। अंत में धर्मशाला के निर्माण के लिए वड़लूर के बाहरी प्रदेश को सही माना!

धर्मशाला का निर्माण वही पर बनवाने के पीछे कई कारण हैं। उनमें से प्रमुख कारण, वहाँ चारों ओर कई धर्मिक क्षेत्र हैं और चार - चार नदियाँ भी बह रही हैं। वहाँ से चिदंबरम की ओर दृष्टि दौडायेंगे तो, उस दिव्य प्रदेश में स्थित भगवान नटराजस्वामी के मंदिर के चार गोपुर गोचर होते हैं। गाँववासी भी बड़े प्रसन्न थे कि श्रीरामलिंगमजी ने यहाँ धर्मशाला बनवाने का निर्णय लिया है। उन्होंने बड़ी श्रद्धा से अपनी - अपनी जमीन

का दान, इसका निर्माण करने के लिए आगे आए। वड़लूर के मातबरों ने स्वेच्छा से अपने १०६ एकड़ की ज़मीन को रामलिंगम के नाम पर पंजीकृत करवा दिया था।

एक दिन, एक शुभ - घड़ी में धर्मशाला के निर्माण की नींव डाली गयी। बड़े उत्साह और फुर्ती से काम आगे बढ़ रहा था। समय - समय पर भक्त गण यथोचित अनुदान समर्पित कर, कार्य को आगे बढाने में सहयोग दे रहे थे। निरंतर शारीरिक श्रमदान चल रहा था। इसी निर्माण कार्य के चलते - चलते रामलिंगमजी के मन में विचार आया कि वड़लूर में एक अन्य स्थान पर ज्ञानसभा को स्थापित किया जाय। तुरन्त उन्होंने ५३ एकड़ की ज़मीन प्राप्त कर, अपने आध्यात्मिक सिद्धान्त, 'समरस शुद्ध सत्यज्ञान' का प्रचार करने के लिए 'सभामंदिर' के नाम से एक और भवन का निर्माण आरंभ - करवाया। रामलिंगमजी ने इसका नाम - 'उत्तर ज्ञान चिदंबरम्' रखा। उनके द्वारा दिए गए नमूने के आधार पर अष्टकोणाकार ज्ञान सभा का निर्माण कमल पुष्प जैसा बनाया गया था। इन दोनों भवनों के निर्माण, के समय रामलिंगमजी वहाँ से एक कोस की दूरी पर स्थित 'मेट्टुकुप्पम' में आश्रम की व्यवस्था कर, वहीं रहने लगे। समय - समय पर इन दोनों भवनों के निर्माण कार्य की प्रगति का निरीक्षण करते और आदेश देते। साथ में ''समरस सन्मार्ग'' से संबंधित प्रवचन भी दिया करते थे। इस आश्रम का नाम उन्होंने 'सिद्धवलीक' दिया था।

धर्मशाला के साथ - साथ ज्ञानसभा मंदिर का निर्माण भी अत्यंत त्वरित गति से चल रहा था। अब ध्वजस्तंभ की प्रतिष्ठा करवाने का समय निकट आया। ठेकेदार आर्मुगम मोदलियार ने ध्वजस्तंभ के लिए

उचित वृक्ष के लिए बहुत ढूँढा किन्तु कुछ भी हाथ नहीं लगा। रामलिंगमजी के आदेशानुसार चेन्नै जाकर बहुत छान बीन करता रहा, किन्तु असफल ही रहा। वापस आकर निराशा भरे स्वर में उसने अपनी असमर्थता बताई। रामलिंगमजी ने आदेश दिया - 'पुनः एक बार मद्रास जाओ और अमुक स्थान पर ढूँढो!' तुरन्त मोदलियार, रामलिंगमजी के द्वारा कहे गए पते पर पंहुँचा। बड़े विशाल काय वृक्ष के तनों को ढूँढते समय उसे लगा कि रामलिंगमजी स्वयं एक बड़े तने पर बैठे हुए हैं। उसे बहुत आश्चर्य हुआ और पूछा - ''स्वामी! आप यहाँ कब आए?'' और उनकी ओर आगे बढ़ा। रामलिंगमजी ने एक मोटे तने को दिखाकर कहा - ''आर्मुगम! इसे देखो! यह हमारे लिए काम आएगा!'' बस, वहाँ से अदृश्य हो गए। ऐसी होती थी, रामलिंगमजी की अनोखी लीलाएँ!'' आर्मुगम ने उसे ही खरीदा और वड़लूर पहुँचवाने की व्यवस्था कर, स्वयं वहाँ से चल पड़ा। ध्वजस्तंभ की प्रतिष्ठा यथावत् हुई।

१०६ एकड़ की ज़मीन में धर्मशाला और ५३ एकड़ में ज्ञानसभा भवनों का निर्माण बडे उत्साह के साथ त्वरितगति से चल रहा था। सैकडों लोग परिश्रम कर रहे थे। इसमें बहुत ऊंचाई में तथा नीचे भी मजदूर काम करते थे। ईंट और लकड़ी देने वालों का इधर-उधर आना-जाना होता था। ऐसे कोलाहल पूर्ण वातावरण में किसी न किसी प्रकार की दुर्घटना नित्य प्रति घट ही जाती थी। किन्तु परमात्मा के लिए समर्पित यह कार्य, श्रीज्योति रामलिंगस्वामीजी जैसे सत्पुरुष के निरीक्षण में चलने के कारण, बिना, किसी अवरोध के, भयानक विपदाओं का सामना किए बिना, त्वरित गति से संपन्न होना, उसी परमात्मा की लीला ही मान सकते हैं।

इस प्रकार से सत्य धर्मशाला और ज्ञान मंदिर के सुन्दर भवनों का निर्माण संपन्न हो गया था। तेलुगु प्रदेश की गिनती के अनुसार 'प्रभवा' नामक वर्ष के वैयासी मास (तमिल प्रदेश की गिनती के अनुसार छठा मास - वृष मास) की एकादशी तिथि, गुरुवार के दिन धर्मशाला का गृहप्रवेश उत्सव संपन्न हुआ। रामलिंगमजी की रचना 'जीवकारुण्य पद्धति' से गीत गाकर, कविताओं का पाठ कर, चिदंबरम वेंकटसुबय्या दीक्षितुलु ने उस भवन समुदाय में 'समरस सन्मार्ग तत्व' के प्रचार का श्रीगणेश किया। वहाँ रामलिंगमजी समरस वैदिक पाठशाला की भी स्थापना की थी। उस पाठशाला में द्राविड़ वेद के नाम से विख्यात तिरुवल्लुवर की रचना को एक अनिवार्य पाठ्यांश के रूप में अध्ययन करवाने की भी व्यवस्था हुई।

धर्मशाला के उद्‌घाटन समारोह के अवसर पर तीन दिनों में प्रायः १६ हज़ार लोगों ने भोजन किया था। तब से लेकर निरंतर सत्यधर्मशाला में भोजन खिलाने की प्रथा आज तक चली आ रही है। भोजन की वेला में भूखे लोगों का पेट भर खिलाने का आदेश रामलिंगमजी ने दिया था। इसका पालन बड़ी श्रद्धा से अन्नदान यज्ञ के रूप में चलाया जा रहा है। उनका आदेश था कि धर्मशाला के चूल्हे कभी बुझने नहीं चाहिए। आज भी इसका पालन हो रहा है और भविष्य में भी होगा, जिसे अपने आप में एक बहुत बड़ी विशेषता मानी जानी चाहिए।

अक्षय पात्र के बारे में हमने सुना है। हमने पढ़ा था कि महाभारत में भगवान श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को अक्षयपात्र प्रदान कर, पाण्ड़वों के महर्षि दुर्वास की कृपा प्राप्त कर सकने योग्य बनाया था। विगत सदी के अंत में, हिमालय पर्वतों की गुफाओं में तपोमग्न महानुभाव का एक बार

पुट्टपर्ति में आगमन हुआ और भगवान सत्यसाई बाबा की कृपा से अक्षयपात्र पाकर अुनी गुफाओं वापस जाने के बाद से अपने भोजन के विषय में निश्चिन्त होने की बात हमने जाना है। ऐसी ही घटनाएं श्रीरामलिंगस्वामी जी की धर्मशाला में भी घटी थी। एक दिन तक वहाँ पधारे सभी भक्तों को देर रात तक भोजन करवा दिया गया था। अब रसोई के द्वार बन्द करने ही वाले थे कि वहाँ सौ से अधिक अतिथियों का आगमन हुआ। वे सब भूखे थे। आश्रम के परिजनों को कुछ सूझा नहीं। बर्तनों में जो भोजन बचा था, वह अतिथियों के लिए बहुत कम पड़ने वाला था। अब तो दुबारा भोजन पकाने के लिए भी समय नहीं! क्या करें? आश्रम के सारे परिजन चिन्तित थे। कुछ उन्हें सूझ नहीं रहा था। इसे जानकर श्रीरामलिंगमजी भोजनशाला में तुरन्त आए और उन्होंने अपने परिजनों को आश्वस्त किया - 'घबराने की कोई आवश्यकता नहीं, भक्तों में भोजन परोस कर अतिथियों का पेट भरिए।' अतिथियों से बैठने के लिए कहकर, उन्होंने स्वयं भोजन के बर्तन को हाथ में लिया और परोसा। उनके हाथों से भोजन खाकर अतिथिगण पूर्ण रूप से तृप्त हुए। तब जाकर परिजनों को लगा कि शायद रामलिंगमजी ने भी भोजनशाला में अक्षयपात्र को लाया होगा।

एक बार धर्मशाला में चावल आदि सारी सामग्री को समाप्त होते देख सब चिन्तित हो उठे कि कल हम अन्नदान का कार्यक्रम कैसे चलायेंगे? उन सबके बीचों बीच रामलिंगमजी कुछ देर तक ध्यान समाधि मुद्रा लगाकर बैठ गए। थोड़ी देर के बाद उन्होंने आश्रम के परिजनों को भरोसा देते हुए कहा - 'सब कुछ कल प्रातःकाल तक प्राप्त होनेवाला है, चिन्ता मत करो।' उनके कथनानुसार दूसरे दिन, सूर्योदय से पहले तीन

गाड़ियों में भर - भर कर चावल की बोरियाँ, दाल, तेल आदि पूरा का पूरा राशन आ गया। परिजनों ने बड़ी उत्सुकता से प्रश्न किया - ''इसे किसने भेजा है, आप लोग कहाँ से आए हैं?'' उनके मुखिये ने उत्तर दिया कि - ''महोदय! मैं तिरुत्तरै शहर का एक साहूकार हूँ। रामलिंगस्वामीजी ने कल रात हमारे घर पधार कर, हमारे आतिथ्य को स्वीकारा था। हमें आशीर्वाद देते हुए आदेश दिया कि इस सामग्री को वड़लूर स्थित धर्मशाला में पहुँचाएँ। हमने उनके आदेश का पालन किया।'' धर्मशाला के कर्मचारी इसे सुनकर अवाक रह गए और उस साहूकार को भी रामलिंगमजी के पास ले गए और सारी बात बताई। रामलिंगमजी ने मुस्कुराते हुए पूरी बात सुनी और उस साहूकार को भभूति का प्रसाद और आशीर्वाद देकर उसे अनुग्रहीत किया।

परमात्मा के अंश से जन्म लेने वालों को ही ऐसी अद्भुत लीलाएँ, चमत्कार और अलौकिक कार्य करना संभव होता है। श्रीरामलिंगमजी ने कई ऐसे चमत्कार दिखाए, जो साधारण लोगों के लिए असंभव होते हैं। एक दिन एक व्यक्ति, मन में कपट भावनाओं को रखकर रामलिंगमजी के पास आया था। उसने अपने सारे शरीर पर तेल लगाया और यहाँ - वहाँ रूई को चिपका कर स्वांग भरते हुए कहा - 'स्वामी जी! आप ही मेरी रक्षा कीजिए! मेरे शरीर पर फोड़े जो आए हैं, इनकी पीड़ा से मुझे मुक्त कीजिए। इस काम के लिए आप ही समर्थ हैं।' कपटी के स्वांग को देख रामलिंगमजी ने हमेशा की भांति मंदहास करते हुए कहा - 'डरो मत बच्चे! बहुत शीघ्र तुम्हारी पीड़ा दूर होगी और तुम स्वस्थ हो जाओगे।' प्रसाद देकर उसे वहाँ से भेज दिया। वह नटखट अपने साथियों के पास आकर अवहेलना के स्वर में हँसने लगा कि, 'देखो मैं ने इस स्वामीजी को कैसे मूर्ख बनाया है!' मज़ाक करते - करते वह अपने शरीर पर

चिपका रखी रूई को निकालना आरंभ-किया। जहाँ - जहाँ से रूई निकालता चला, वहाँ - वहाँ बड़े - बड़े फोड़े उग आते दिखे। छाले पड़ने लगे और उनमें से पीब और खून बहने लगा। तब उस शरारती को समझ में आया कि यह रामलिगंमजी की ही महिमा है और उनके पैर पडकर क्षमा याचना करने लगा कि मेरी रक्षा कीजिए!'' सिसिक कर रो रहे उस व्यक्ति को क्षमा कर, भभूति दी और वहाँ की बावड़ी के पानी से स्नान करने का आदेश दिया। तब से वह शरारती छोड़ने का संकल्प कर स्नान कर आया। रामलिंगमजी का आज्ञाकारी बना। उसके सारे फोड़े ठीक हो गए थे।

'कुण्णालचावड़ी' नामक एक प्रदेश में मुस्लिम भक्त था, जो पुलिस हेड़कानिस्टेबल की नौकरी करता था। एक बार रामलिंगमजी उस प्रदेश में पधारे थे। सायं संध्या के समय अपने प्रवचन संपन्न करने के पश्चात् भक्तों को भभूति बाँट रहे थे। उस अवसर पर इस मुसलमान भक्त ने रामलिंगमजी को एक नया वस्त्र समर्पित करने के लिए मंच पर आया। पूरी श्रद्धा के साथ उस वस्त्र का समर्पण करते हुए रामलिंगमजी से अनुरोध-किया कि कल प्रातःकाल तक इसे धारण कर के ही रहना! उन्होंने अपने भक्त की बात मानी। रात में बसंगी प्रसाद ग्रहण कर वे जब वहाँ सो रहे थे, तब वहाँ एक चोर आया और उनके इस नए वस्त्र को खींचने लगा। पुलिस होने के कारण उस भक्त ने चोर को पकड़ा। रामलिंगमजी ने पुलिस भक्त को समझाकर, अपने इस वस्त्र को चोर को दे दिया था।

मेट्टुकुप्पम् के आश्रम - 'सिद्धिवलीक' में रामलिंगमजी अपना प्रवचन दे रही थे। तब वहाँ एक मेमना, जो लंगड़ा था, ऐसा खड़ा हुआ

था, जैसे कि वह प्रवचन सुन रहा हो। प्रवचन के बाद जब भक्तगण सिद्धवलीक आश्रम की परिक्रमा कर रहे थे, तब इस लंगड़े मेमने को भी उनका साथ देते हुए रामलिंगमजी ने देखा। तुरन्त उन्होंने एक भक्त को बुलाकर आदेश दिया कि 'इस मेमने को भी भोजन दो!' सभी जीवों के प्रति उनके मन में इतनी करुणा थी। लगता था कि मानो दया और करुणा जैसे गुण, साक्षात् श्रीज्योति रामलिंगस्वामी के रूप धारण कर उपस्थित हैं।

वड़लूर की हरिजन बस्ती में अमावस नाम का एक दलित व्यक्ति रहा करता था, जिसका मन, आध्यात्मिक चिन्तन से भरा था। लोग इसी आध्यात्मिकता के कारण उसे थोड़ा बहुत जानते थे। एक दिन उसे रामलिंगमजी ने अपने आश्रम में बुलाकर उपदेश दिया कि - 'अब तुम मांसभक्षण छोड़ दो! मरे हुए भैंस आदि जीवों को अब से खनन कर दो!' इस प्रकार से समझाकर, उसे ही नहीं बल्कि उस गाँव के कई अन्य वासियों को भी शाकाहारी बनने के लिए रामलिंगमजी ने प्रेरित किया था। उस अवसर पर अमावस ने उनसे कहा - 'स्वामी! परिवार के पालन - पोषण करने में बहुत दिक्कत हो रही है!' उसकी गिड़गिड़ाहट को देख रामलिंगमजी ने उस पर अपनी कृपा दिखाई। प्रतिदिन उसे अठन्नी प्राप्त करने का प्रावधान किया।

एक बार भक्तों ने रामलिंगमजी के साथ फोटो उतरने के संकल्प से मद्रास से एक फोटोग्राफर को बुलवाया, जिसका नाम माशिलामणि मोदलियार था। उसने फोटो खींची, किन्तु चित्र नहीं आया। दुबारा प्रयत्न किया, किन्तु वह भी नहीं आया था। ऐसा आठ बार प्रयास करने पर भी असफल ही हुए। भक्तों ने दुःखी होकर अपने प्रयासों को रोक दिया।

बाद में कुछ दिनों के पश्चात् पश्रुट्टि गाँव के वासी ने पूरी भक्ति और तन्मयता के साथ रामलिंगमजी की मिट्टी की एक प्रतिमा बनाई थी। पूरी श्रद्धा के साथ आश्रम में लाकर रामलिंगमजी के समक्ष रखकर अभिवादन किया। किन्तु उन्होंने उस प्रतिमा को चकनाचूर कर दिया था। उस भक्त ने बाद में अपनी खुशी के लिए एक और मूर्ति को बनाकर अपने ही घर में पूजने लगा। आज हम श्रीरामलिंगस्वामीजी के जितने चित्र देख रहे हैं, वे सारे चित्र उसी प्रतिमा को देखकर बनाए गए चित्र हैं। उसी की आज भी हम सब पूजा कर रहे हैं।

पुदुपेट गाँव में पीने के पानी के लिए सारे ग्रामवासी तरस रहे थे। वहाँ केवल दो ही बावड़याँ थीं पर दोनों का जल खारा था। गरमी के दिनों में वह खारा पानी भी सूख जाता था। दोनों कुएँ सूख गए थे। एक बार ग्रामवासियों को पता चला कि रामलिंगमजी उधर से यात्र करते हुए जाने वाले हैं। सारे गाँव के वासी, मंगलवाद्यों को बजाते हुए उनका स्वागत कर, पेय जल की कठिनाइयों के बारे में बताया और उस समस्या को दूर करने की प्रार्थना की। रामलिंगमजी उनकी समस्या को समझते हुए पुदुपेट जाकर एक स्थान पर खड़े हुए। उन्होंने गाँव के मुखिए को बुलाकर आदेश दिया, 'उस बावड़ी से दो घड़े जल लाकर मुझ पर डालने की व्यवस्था कीजिए।' इसी कथन के अनुसार कुछ लोगों ने, दो घड़ों को खारे पानी से भरा और लाकर रामलिंगमजी के सिर पर ऐसे डाला कि मानो वे उनका अभिषेक कर रहे हों। तुरन्त घने मेघ घिर आए। सघन वर्षा हुई और दोनों कुएँ मीठे पानी से भर आए। तब से लेकर आज तक उन बावड़ियों में पानी कभी सूखता नहीं। मधुर पेय जल का आस्वादन आज भी कर सकते हैं।

मंजुकुप्पम् कचहरी में कार्यरत अधिकारी, रामचन्द्र मोदलियार ने वड़लूर जाकर रामलिंगमजी के दर्शन किए और उन्हें अपने गाँव पधारने का न्यौता दिया। रामलिंगमजी ने हाँ कह दी और तुरन्त उनके साथ चलने के लिए एक बैल गाड़ी का प्रबन्ध कर लिया। दोनों यात्रा करते जा रहे थे, और मार्ग में उन पर चोरों ने आक्रमण किया था। बैलगाड़ी को चलाने वाला और, उनका नौकर - दोनों डर के मारे भाग गए। चोरों ने मोदलियार को पकड़ा और धमकी दिया कि वे उनकी अंगूठियाँ देदें। रामलिंगमजी ने उनके समीप जाकर पूछा - 'क्या आपको इन अंगूठियों की आवश्यकता है?' उन चोरों में से एक ने ऊँचे स्वर में - 'बस, बस इस चिकनी चूपड़ी बातें हमें नहीं सुनना हैं!' कहते हुए उन्हें मारने के लिए हाथ उठाया। हाथ ऊपर उठा, और वहीं पर अटक गया। तब जाकर उन्हें रामलिंगमजी की महानता का पता चला। पैर पड़कर क्षमा याचना की। उन चोरों को क्षमा कर, रामलिंगमजी और मोदलियार वहाँ से आगे बढ़ चले।

एक और घटना! एक दिन रामलिंगमजी प्रातःकालीन शौच निपटाने मैदान जाकर, काफी देर तक वापस नहीं आए। तब उनका शिष्य वहाँ आया और रामलिंगमजी के सारे अंग अलग - अलग पड़े देख, हक्का-बक्का रह गया। थर - थर कांप रहे षण्मुखम् पिल्लै नामक उस शिष्य के पास रामलिंगमजी प्रकट हुए। उन्होंने उस शिष्य को सावधान किया कि तुमको ऐसा आकर देखना नहीं चाहिए।

विजयराघव नायडू कुरिंजि पादि के हेड़कानिस्टेबल थे। उन्हें कुछ ऐसी बीमारी लग गई थी कि, वे दिन - प्रति दिन सूखकर काँटा होते जा रहे थे। कई प्रकार की चिकित्साएँ करवाने पर भी कुछ ठीक नहीं हुआ।

जीवन जीने से विरक्त होकर अंतिम प्रयास के रूप में वे रामलिंगमजी के दर्शन करने आए और अपने लिए कुछ उपाय पूछा। रामलिंगमजी ने उन्हें श्रीराम नाम का जप करने का आदेश दिया। स्तोत्र पाठ करने के लिए कुछ कविताएँ लिखकर, नायडू जी को आश्वासन दिया कि - 'डरने की कोई बात नहीं, सब ठीक हो जाएगा।' उन स्तोत्रों का पाठ करना आरंभ करने के बाद कुछ ही दिनों में नायडूजी का स्वास्थ्य ठीक हुआ।

रामलिंगमजी ने ऐसे कई अलौकिक कार्य किए थे। एक और घटना के बारे में सूचित करना होगा। मद्रास का वासी एक ईसाई व्यक्ति निर्धनता के कारण परिवार का पालन-पोषण नहीं कर पा रहा था। उसने रामलिंगमजी के पास आकर प्रार्थना की कि - 'स्वामी! इस गरीब का उद्धार आप ही कीजिए।' रामालिंगमजी ने उसे पारस विद्या का कुछ अंश सिखाया और सावधान किया कि 'रोज केवल दो रूपयों का स्वर्ण बनाकर बेचना और परिवार को चलाना! कभी लालची नहीं बनना!' वह भक्त उनके आदेश का पालन करता रहा। संतुष्ट हुआ था। किन्तु एक दिन, रामलिंगमजी के आदेश की अवहेलना किया तो उसकी लालच ने प्रभाव दिखाया और दो रूपए की आमदनी भी नहीं मिली। अपने किए पर उसे पश्चात्ताप हुआ और दुःखी होकर रामलिंगमजी के पास गया। उन्होंने उसे ज्ञान का उपदेश दिया।

अब रामलिंगमजी को लगा कि मेरे अवतरित होने का लक्ष्य पूरा हुआ है और मुझे शिव जी से एकाकार हो जाना चाहिए। इसके लिए अच्छा मुहूर्त निकालना चाहा। मेट्टुकुप्पम के सिद्धवलीक कुटीर में एक बड़ा दर्पण मंगवाकर रखा और उसकी चालीस दिन तक पूजा की। तत्पश्चात् उस दर्पण को सभापति शिवाचार्यजी के हाथों वड़लूर ज्ञानसभा

में पहुँचवाया था। उस सभा मंदिर में उस बड़े दर्पण को सजाकर रखा। उसके आगे एक बड़ी ज्योति को प्रज्वलित करवाया और सभी आश्रमवासी भक्तों से उस ज्योति की भक्ति और श्रद्धा से पूजा आदि कार्यक्रमों का निर्वाह भी करवाया। इस ज्योति पूजन के लिए हर माह का एक विशेष दिवस को पर्व के रूप में चुना गया था। तब से हर माह, पुष्य नक्षत्र के दिन बहुत बड़ी संख्या में भक्तगण, ज्ञानसभा में ज्योति की आराधना कर रामलिंगमजी के आशीर्वाद स्वीकारने की प्रथा बन गई है। मकरवास ज्योति के दर्शन आज भी एक महान विशेष उत्सव विशेष के रूप में मनाना ध्यान देने योग्य है। भक्तों का अटूट विश्वास है कि इससे मोक्ष की कामना करने वालों को मोक्ष की प्राप्ति अवश्य होगी।

तब से वड़लूर ज्ञानसभा मंदिर में ज्योति को प्रज्वलित होते आज भी हम दर्शन कर सकते हैं। सात परदों से होते हुए भक्तगण भीतर प्रवेश कर, ज्योति का दर्शन करते हैं। बड़ों का कथन है कि आत्मज्योति के दर्शन करने के लिए, ढके हुए सात माया शक्तियों को हटाना पड़ता है। वडलूर के इस ज्योति दर्शन से भक्तगण तर रहे हैं। रामलिंगमस्वामीजी मेट्टुकुप्पम् के सिद्धवलीक आश्रम में एक कमरे में जाकर, घण्टों भर एकांत में ध्यान लगाकर बैठे रह जाते थे। कभी - कभी बाहर आकर तात्विक भाषण दिया करते थे। उनका कई दिनों तक कमरे में ही ध्यान में रहना और बहुत कम बार बाहर आना धीरे - धीरे अधिक होता जा रहा था।

श्रीमुख नामक वर्ष के धनुर्मास आरंभ होने के बाद से बाहर आना ही नहीं बाल्कि, दर्शन देने का समय भी रामलिंगमजी ने बहुत कम कर दिया था। आखिरी दिन बिजली की भाँति चमक कर उन्होंने कहा - 'भक्तों! दूकान खोलने पर भी ग्राहक कोई नहीं आ रहा है। अतः इसे बन्द कर दिया। अब से आप लोग दैवानुग्रह की प्राप्ति के लिए इस दिव्य ज्योति के दर्शन कर प्रार्थना कीजिए। अब मैं आपको केवल ढाई घड़ी के लिए ही दिखाई दूँगा। तत्पश्चात् सर्वान्तर्यामी बनकर रहूँगा। कृपा ज्योति स्वरूप का आप लोग दर्शन कर पाएँगे। आप कई चमत्कार देख पाएँगे। मैं कमरे के भीतर जाकर कपाट बन्द कर दूँगा। थोड़े दिनों तक द्वार खोलने का प्रयत्न कोई भी मत कीजिए।' रामलिंगमजी ने अंदर प्रवेश कर कपाट बन्द कर लिया था। जनवरी २० के दिन १८७४ (श्रीमुख नामक वर्ष के तमिल गिनती के अनुसार 'तै' माह (छठा) था। कई दिन बीत जाने पर भी कहीं कोई आहट नहीं हुई। भक्तों को लग नहीं रहा था कि रामलिंगमजी पुनः दर्शन देंगे। इस स्थिति में सारे भक्तगण मिलकर प्रार्थना करने लगे। जिलाधीश, वैद्य और तहसीलदार तथा दूसरे सरकारी अधिकारियों ने आकर भक्तों के सामने कपाट खुलवाये। इस खोलने के क्रम में तहसीलदार ने कुछ अशिष्टता पूर्वक व्यवहार किया तो, उसका परिणाम उसे तुरन्त भुगतना भी पड़ा। श्रद्धा और भक्ति से कार्य कर रहे जिलाधीश और वैद्य को तहसीलदार की इस स्थिति पर दया आई और उसे नौकर को साथ देकर घर भिजवाया।

कमरे के अंदर प्रवेश करने पर उन्हें एक दिव्य ज्योति का दर्शन हुआ। रामलिंगमजी कहीं दिखाई नहीं दिए। यह उनकी महिमा थी; सिद्ध पुरुष जो थे। इस प्रकार से जीवन्मुक्ति प्राप्त करनेवाले महान अवतारी थे श्रीज्योति रामलिंगमजी।

महापुरुषों का महाभिनिष्क्रमण भिन्न - भिन्न प्रकार से, विलक्षण ढ़ंग से होने की बात हम उनकी जीवनियों से जानते हैं। कुछ विशेष व्यक्तियों के साथ यह घटना और भी विलक्षण होती आ रही है। मंत्रालयम् के

श्रीराघवेन्द्र स्वामी का महाभिनिष्क्रमण और श्रीपोतुलूरि वीरब्रह्मेन्द्र स्वामी की समाधि आदि इसके महान उदाहरण हैं। श्रीज्योति रामलिंगमजी के साथ की घटी उपरोक्त घटना भी उसमें जुड़ती है। कमरे के अंदर प्रवेश करने के पश्चात् उस महानुभाव को हुआ क्या? थोड़ें दिनों के बाद कवाटों को तोड़ कर भीतर प्रवेश करने वाले अधिकारीगण ने संदेह किया कि कहीं कमरे में कोई सुरंग मार्ग तो नहीं है? या ऊपर छत पर चढ़कर सबकी दृष्टि से बचते हुए उस प्रदेश को उन्होंने छोड़ा होगा। तरह - तरह के संदेहों के साथ छान - बीन करने वाले अधिकारीगण को अंत में जाकर अवगत हुआ कि श्रीरामलिंगमजी ने ज्योति स्वरूप को धारण किया है।

ज्योति रामलिंगस्वामी के नाम से विख्यात होकर वे आज भी अपने भक्तों से पूजे जा रहे हैं। उस महापुरुष के संदेश विलक्षण ही नहीं बल्कि क्रांतिकारी भी हैं, यथा -

१) आध्यात्मिकता में जात के आधार पर भेद करना वर्जित है। एक दूसरे के साथ मेल मिलाप करते हुए अपने द्वारा निर्दिष्ट, सन्मार्ग की सीख का पालन करना चाहिए।

२) उनसे रचित 'तिरुवरुट्पा' नामक ग्रन्थ तो अपने आप में एक महान प्रसाद माना जाता है। वह आध्यात्मिक संदेशों, भाषा सौन्दर्य, साहित्यिक शिल्प, भक्तिभाव की गंभीरता आदि का खान है। तमिलनाडु के पंडित ही नहीं, बल्कि अशिक्षित प्रजा के मन में भी उस रचना ने अपना विलक्षण और शाश्वत स्थान को बनाये रखा है।

३) उनके समरस सन्मार्ग का बोध, आध्यात्मिक प्रगति के नवीन राजमार्ग कह सकते हैं।

४) करुणा की साक्षात् मूर्ति के रूप में महात्मा बुद्ध और ईसा मसीह का स्मरण दिलाते हुए, उन्होंने अहिंसा को व्रत के रूप में पालन कर, एक आदर्श की स्थापना की थी। 'आत्मवत् सर्व भूतानि' सूक्ति का अक्षरशः पालन करने वाले अवतारी पुरुष रहें।

५) श्रीरामलिंगमजी भौतिक सुखों के प्रति विमुख थे। जितेन्द्रिय बन, ज्योति का रूप में प्रकाशित, पावन रूप था उनका।

६) ''कलौ भक्ति विशिष्टताओं की उक्ति के अनुसार सत्य को प्रकट करने के लिए कई तीर्थों और पुण्य क्षेत्रों के दर्शन कर, वहाँ विराजमान देवी - देवताओं पर स्तोत्र रचा और उन्होंने उनका गायन भी किया था। इन कार्यों में उन्होंने आदिशंकराचार्य जी का स्मरण दिलाया।

७) हिन्दू जीवन संस्कृति के विवादास्पद वर्णाश्रम की भावनाओं के संकल्प और विकल्पों को भक्तों के हृदय को स्पर्श न करने के लिए एक शान्त क्रांति को समाज में लाने वाले आध्यात्मिक धीर पुरुष थे, ज्योति रामलिंगस्वामी!

८) श्रीरामलिंगमजी का जन्म ५ अक्तूबर, १८२३ में हुआ था। उन्होंने ३० जनवरी, १८७४ में सिद्धि प्राप्त कर अपने अवतार को समाप्त कर दिया था। मनुष्य के रूप में वे ४७ वर्ष पर चार महीनों तक (४ दिन कम) जीवित रहे।

९) उन्होंने अपने भक्तों को महान मंत्रपुष्प को प्रदान किया था - 'आरुट्पेरुंज्योति - तनिप्पेरुम् करुणै!' अर्थात् 'कृपामहाज्योति पृथगभूत कारुण्यम्!'

Grace that flows from light

Grace that flows from supreme comparison!

१०) हमारा जीवन जब करुणा से भरा रहता है, तब भगवान की कृपा हम पर बरसती है। हम दैवांश से सच्चिदानंद स्वरूप के रूप में क्रमिक रूप से विकसित हो सकते हैं।

११) विश्व मानव सौभ्रातृत्व की भावना ही उनका धर्म है। उनका मंत्र है - करुणा, करुणा और करुणा!

१२) उनके भूलोक के अवतार की अवाधि को हम तीन भोगों में विभाजित कर सकते हैं -

क) मद्रास (चेन्नै) :- १८२५-१८५८

ख) करंगुलि :- १८५८-१८६७

ग) वड़लूर, मेट्टुकुप्पम् :- १८६७-१८७४

१३) उन्होंने बचपन से दिव्य अवतार पुरुष श्री ज्ञान संबंधर को अपने आदर्श के रूप में स्वीकारा था। शैव भक्तों के लिए मानव देह में अवतरित चार दिव्य पुरुष अत्यंत पूजनीय हैं। वे हैं - अप्पर, सुन्दरर, माणिक्य वाचकर और ज्ञान संबंधर। शैव धर्म के अनुयायियों के लिए परम आदरणीय ६३ नायन्मारों में ये चार अत्यंत प्रसिद्ध हैं। कुछ लोग इनमें ज्ञानसंबंधर की गिनती नहीं करते हैं। मात्र, १६ वर्ष की आयु तक ही वे जीवित रहे। आदिशंकराचार्यजी के लिए भी वे प्रेरक रहे। आदिशंकराचार्यजी ने अपनी रचना 'सौन्दर्य लहरी' में तिरुज्ञानसंबंधर को 'द्रविड़ शिशु' के नाम से प्रशंसा की थी।

रामलिंगमजी, ने दिव्यज्ञान परिणिति प्राप्त करने तक ज्ञान संबंधरजी को ही अपने गुरुस्थान पर विराजमान कर रखा था।

गुरुपीठ पर बिठाकर रामलिंगमजी ने ज्ञान संबंधर जी की स्तुति इन शब्दों में की - 'हे सद्गुरु ज्ञान संबंधर! आपके उपदेशों ने हमें उत्तेजित

किया है। आत्मानुभव के आधार पर आपके दिव्य अनुग्रह को प्राप्त कर, उस विरल तथा उदात्त अनुभूति के द्वारा शुद्ध शिवानुभूति को प्राप्त कर सकने के तथ्य का बोध आपने ही मुझे करवाया! हे ज्ञानसंबंधर! तीन वर्ष की आयु में जब आपने भूख के कारण रोदन किया था - तब स्वयं सारे जगत की जननी माता पार्वति ने अपना स्तन पान करवाकर आपको अनुग्रहीत किया था। उस महान अमृत रूपी क्षीर पान के प्रभाव से आपने संसार को सत्य मार्ग का अवलोकन करवाया!'

१४) तमिल प्रदेश को, समय - समय पर कई पीढ़ियों से आध्यात्मिक संस्कृति में कई भक्तों ने, सिद्धों ने, नायन्मारों ने, आल्वारों ने आप्लावित कर दिया था। ये सब भक्ति आंदोलन के मूल पुरुष थे और उसे आगे बढाने में सक्रिय योगदान भी दिया था। तिरुमूलर एक महान सिद्ध पुरुष थे; पतंजलि अवतार पुरुष थे। श्रीज्योति रामलिंगस्वामी भी उसी परंपरा से जुड़े सिद्ध अवतार पुरुष ही थे।

१५) श्रीज्योति रामलिंगस्वामी, तमिलनाडु में 'वल्ललार' के नाम से विख्यात हैं। 'वल्लल्' का अर्थ है 'दान'। अन्नदान, कविता का दान, भक्ति भाव का दान, करुणा गुण का दान, इस पूरे संसार के जड़ और चेतन प्रकृति को प्रेम का दान - ऐसे कई क्षेत्रों में अपने दान गुण और उदारता को कई गुना प्रदान कर, अपने इस 'वल्ललार' नाम को उन्होंने सार्थक बनाया था। दान गुण के बारे में प्रस्तावित करते समय हम एक शिबि को, एक कर्ण को स्मरण करते हैं। उसी प्रकार से श्री मंचु लिंग स्वामी जी भी विख्यात हैं। तमिल प्रदेश में उनकी प्रशंसा, 'तिरुअराट् प्रकाशवल्ललार' (श्रीज्ञानज्योति दान गुण शेखर) के नाम से होती है।

१६) रामलिंगमजी को चिदंबरम रामलिंगस्वामी के नाम से भी जाना जाता है।

१७) १९ वीं शताब्दी के सुप्रसिद्ध दिव्य पुरुषों में से श्रीरामलिंगमजी भी एक हैं। इस शताब्दी में विख्यात आध्यात्मिकता और सामाजिक सुधारों की अभिलाषा करते हुए, अति उत्तम साहित्य की रचना करने वाले कविश्रेष्ठ थे।

१८) जाति से संबंधित भेदों का पालन करना अमानवीय घोषित करने के साथ - साथ स्वयं उसका आचरण सदा करने वाले आदर्श मानव थे।

१९) रामलिंगमजी ने ''शुद्ध सन्मार्ग'' तत्व को प्रतिपादित किया था। मनुष्य जीवन का ध्येय है - प्रेम मुक्त दानशीलता! इससे प्रगति पाकर परमात्मा की सेवा करते हुए विशुद्ध ज्ञान की प्राप्ति करना, यहाँ मुख्य विषय है।

२०) रामलिंगमजी विशुद्ध अहिंसा मार्ग के अनुयायी थे, जो ''मांसाहार खाने वालों को देखते समय मेरा मन अन्यंत दुःखी होता है।'' कहा करते थे।

२१) रामलिंगमजी द्वारा स्थापित, ''सत्यज्ञानसभा'' (वडलूर, जनवरी २५, १८७२) का प्रमुख उद्देश्य, ''मानव सेवा के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति'' था।

२२) परमात्मा की व्याख्या उन्होंने ''अरुल्पेरुंज्योति'' के रूप में की है। अर्थात् ''करुणा और ज्ञान'' का रूप ही परमात्मा है।

२३) दया और करुणा का मार्ग ही परमात्मा के पास ले जाने वाला एकमात्र मार्ग है।

२४) सन् १८७० में रामलिंगमजी द्वारा स्थापित ''सत्यज्ञानसभा'' एक मंदिर नहीं है। वहाँ पूजा और निवेदन के लिए स्थान नहीं। वहाँ आशीर्वादों की वर्षा भी नहीं होती। कोई भी शाकाहारी, जात उसका कुछ भी क्यों न हो, उस सभा में प्रवेश कर सकते हैं। मांसाहारी बाहर तक आ सकते हैं।

२५) रामलिंगमजी सदा कहा करते थे कि, 'हम जिसे ज्ञान कह रहे हैं, वास्तव में वह सच्चा ज्ञान नहीं, केवल माया ज्ञान है। वह ज्ञान की चरम सीमा भी नहीं।'

२६) भूखे लोगों को अन्नदान करने का अर्थ है, श्रेष्ठ देव पूजा करना!

२७) जन्म से बनने वाली उत्तमता और अधमता को उन्होंने निंदनीय माना।

२८) एक महान कवि और अद्‌भुत गायक के रूप में रामलिंगमजी ने ५८१८ कविताओं की रचना की थी। विश्वमानव प्रेम और शांति से ओतप्रोत आध्यात्मिक तत्वों को पग-पग पर इन कविताओं में प्रतिध्वनित होते हुए पा सकते हैं। इन कविताओं का संकलन 'तिरुवरुट्पा' के नाम से हुआ है। (The Holy Book of Grace)

२९) मेट्टुकुप्पम् और सिद्धवलीक आश्रमों में १८७३ में अक्तूबर २२ के दिन रामलिंगमजी से दिया गया आखिरी संदेश संपूर्ण मनुष्य जाति के लिए वरप्रसाद मान सकते हैं। 'हमारी सोच से परे, हमें

चैतन्यवान बनाने वाली जो शक्ति है, उसके बारे में हमें जानना चाहिए।' इसके पश्चात् उन्होंने अपने कमरे में जिस ज्योति पर ध्यान लगा कर आराधना की थी, उसे बाहर लाकर, उस ज्योति पर ध्यान केंद्रित करने का आदेश श्रीरामलिंगस्वामीजी ने अपने भक्तों को दिया था।

* * *